भारत की पहली महिला शिक्षक–सावित्री बाई फुले

❑ सुमन सैनी

सावित्री बाई फुले सिर्फ इसलिए महत्वपूर्ण नहीं हैं कि वे महात्मा ज्योतिबा फुले की सहयोगिनी थीं । उन्हें भारत की पहली महिला शिक्षक के रूप में जानना भी आवश्यक है । अगर सावित्री बाई को उनके ऐतिहासिक समय में समझा जाये, तो वे और प्रेरक लगती हैं । ऐसा लगता है कि भारतीय समाज के बुनियादी ढांचे में बहुत फर्क नहीं आया है इसलिए सावित्री बाई का ही नहीं बल्कि सगुणाबाई क्षीरसागर और फातिमा शेख जैसी शिक्षकों का अवदान स्मरणीय है । समाज परिवर्तन, दलित उभार और स्त्री-स्वातंत्र्य के मुद्दे किस प्रकार बेहतर शिक्षा से अनिवार्यत: जुडे हैं, इस इतिवृत्त में इस बात की झलक मिलती है ।

महात्मा ज्योतिबा फुले के जीवन-कार्य में उनकी धर्मपत्नी सावित्री बाई का योगदान अत्यधिक महत्वपूर्ण रहा है । जिस सामाजिक इतिहास में स्वयं ज्योतिबा फुले के कार्य का सही लेखा जोखा नहीं हुआ, वहां उनके कार्य में योगदान देने वाली सावित्री बाई के कार्य के मूल्यांकन की आशा करना मुश्किल है। सावित्री बाई महात्मा फुले की पत्नी थी । महात्मा फुले ने उन्हें पढ़ाया और एक अध्यापिका बनाकर सावित्री बाई ने अध्यापन का काम किया। इतिहासकारों ने सावित्री बाई के कार्यों का केवल इतना ही उल्लेख करके संतोष मान लिया है । लेकिन स्त्री स्वातंत्र्य और स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में 19 वीं शती के भारत में जिन महिलाओं ने क्रान्तिकारी काम किया, सावित्री बाई उनमें अग्रणी हैं ।

पूर्व की भांति 19 वीं सदी में भी नारी गुलाम बनकर सामाजिक व्यवस्था की चक्की में पिस रही थी । अज्ञानान्धकार, कर्मकाण्ड, वर्णभेद जांति-पांति, बाल-विवाह, मुंडन तथा सती प्रथा आदि व्याधियों से नारी जाति व्यथित थी । नारी को कोई महत्व मिलने की उम्मीद नहीं थी । स्वयं स्त्री जाति भी अपना अस्तित्व खो चुकी थी और पराबलंबी जीवन जीने की आदी हो गयी थी। तत्कालीन पंडित एवं धर्मगुरू भी इसी बात को दोहराते रहे कि नारी परावलंबी है - वह पिता, पति अथवा भाई के सहारे बिना जी नहीं सकती ।

फुले युगीन महाराष्ट्र में यह सामाजिक मान्यता थी कि विद्यार्जन से स्त्री दुराग्रही, दुष्ट, चंचल और विश्वास के लिए अपात्र हो जाती है । समाज में यह मान्यता भी थी कि स्त्री-शिक्षा आरंभ हुई तो स्त्री कुमार्ग पर चलेगी और घर का सुख-चैन नष्ट हो जाएगा । स्त्री के लिए शिक्षा प्राप्ति समाज की दृष्टि में भ्रष्टाचार समझा जाता था । लड़की के शिक्षा प्राप्त करने पर उसे अकाल वैधव्य सहना पड़ता है, ऐसी भ्रामक धारणाएं भी थीं । बुजुर्गों के सामने पत्नी का अपने पति से बात करना भी असंभव था । खाना खाने के लिए पति के साथ बैठना, नौकरी हेतु परदेश गए पति के साथ जाना आदि भी निषिद्ध था । स्त्री परतंत्र एवं अबला है, उसके मतानुसार चलने पर सर्वस्त्र का नाश होगा । ऐसे विश्वासों के चलते लोग स्त्री के लिए शिक्षा निषिद्ध मानते थे ।

भारत में स्त्री शिक्षा का प्रथम प्रयास महात्मा फुले ने अपने खेत के आम के पेड़ की छाया में किया। यही भारतीय स्त्री शिक्षा की प्रथम प्रयोगशाला थी, जिसमें सगुणाबाई क्षीरसागर और सावित्री बाई फुले ने विद्यार्थी बनकर शिक्षा लेना प्रारंभ किया। खेत की मिट्टी में टहनियों की कलम बनाकर अक्षर ज्ञान की शुरुआत हुई। रोजमर्रा के जीवन-प्रसंगों के सहारे वाक्य रचना होने लगी । सुबह से लेकर दोपहर तक खेती का काम और भोजन के पश्चात आम के पेड़ की छाया में भाषा गणित और सामान्य ज्ञान आदि के पाठ इन दो छात्राओं को पढ़ाए जाते । बाद में पुणे के नार्मन स्कूल की प्रमुख मिसेज मिचेल ने इन दो छात्राओं की कडी परीक्षा ली और इन्हें तीसरी कक्षा में दाखिल कर लिया । रे. जेम्स मिचेल की पत्नी मिसेज मिचेल बहुत ही दयाशील थीं उन्होंने नार्मल स्कूल की स्थापना की थी । शिक्षा के दौरान सावित्री बाई ने नीग्रो लोगों को गुलामी से मुक्ति विश्वविद्यालय दिलाने वाले टामस क्लार्कसन की जीवनी पढ़ी । शूद्रों और गुलामों की दासता से सावित्री अवगत हो गयीं । टामस क्लार्कसन 1785 में क्रेम्बिज विश्वविद्यालय का एक दयाशील छात्र था । अमेरिकी लोग अफ्रीका के नीग्रो लोगों को गुलाम बनाकर उनसे जानवर का सा काम लेते थे । टामस क्लार्कसन ने इस अन्याय के विरोध में लडना शुरू किया । इसमें उसे सफलता मिली और गुलामी के विरुद्ध कानून बनाने के लिए सरकार को मजबूर होना पड़ा ।

विश्व के इतिहास में 1848 का वर्ष अपना विशेष महत्व रखता है । इसी वर्ष विश्व भर में धर्मगुरु एवं पाखंडियों के आडम्बर के विरोध में आन्दोलन छिड गया। इंग्लैंड में स्त्री-स्वतंत्रता की मांग होने लगी, फ्रांस में मानव-अधिकारों के लिए संघर्ष शुरू हुआ। सावित्री बाई पर इन सब घटनाओं का भी असर पडा। महात्मा फुले ने 1848 में पुणे स्थित मिढे की हवेली में पहली कन्या पाठशाला शुरू की और इसमें लडकियों को भी प्रवेश दिया। सावित्री बाई शिक्षा पूरी करके इस पाठशाला में अध्यापिका बन गयीं । उनके अध्यापिका बनने का लोगों ने बहुत विरोध किया। कठमुल्लों ने हल्ला मचाया कि बहू के अध्यापिका बनने से कुल की इज्जत मिट जायेगी, बहू बिगड़ जायेगी तथा धर्म पर कलंक लग जायेगा और आने वाली 42 पीढ़ियों को नरक में जाना पड़ेगा । सामाजिक दबाव के चलते ज्योतिबा के पिता गोविन्द राव ने अपने पुत्र और पुत्रवधू को घर से बाहर निकाल दिया । लेकिन सावित्री ने अध्यापन नहीं छोड़ा ।

जब एक स्कूल का कार्यभार सावित्री सफलता के साथ संभालने लगी तो ज्योतिबा ने 18 सितम्बर, 1851 में पुणे स्थित रास्ता पेठ में लड़कियों का दूसरा स्कूल खोला और 15 मार्च 1852 में बताल पेठ में लड़कियों का तीसरा स्कूल भी खोला । उस समय दादोबा पांडुरंग तर्खडकर देशी स्कूलों के पर्यवेक्षक का कार्यभार संभालते थे । उन्होंने ज्योतिबा की संस्था द्वारा चलायी जाने वाली पाठशाला की प्रथम परीक्षा 16 अक्टूबर, 1851 में ली । उन्होंने लिखा, '' इतने कम समय में हुई स्कूल की इतनी अधिक प्रगति संस्था को गौरवान्वित करने वाली है । इस स्कूल में 'नीति बोध कथा' शीर्षक पुस्तक पाठ्यक्रम में थी । साथ ही, बाल बोध पढ़ना, शुद्ध व्याकरण, गणित, भूगोल की संक्षिप्त जानकारी, मराठों का इतिहास तथा एशिया, यूरोप और भारत के नक्शों की जानकारी पाठ्यक्रम में शामिल थी । '' पुणे विश्वविद्यालय के मेजर कैन्डी ने अपने वृत्तान्त में लिखा, ''स्कूल की लड़कियों की कुशाग्र बुद्धि एवं प्रगति देखकर मुझे बहुत संतोष मिला ।'

प्रारंभ में ब्रिट्रिश शासन ने भारत में स्त्री शिक्षा की ओर ज्यादा ध्यान नहीं दिया था । मिस कुक ने 1820 में बंगाल में कुछ स्कूल खोले । 1829 में वह बंबई आयीं ओर मिस्टर बुईल्सन साहब से विवाह होने पर मिसेज बुईल्सन बन गईं । बम्बई में उन्होंने छह स्कूल खोले ।

अंग्रेज सरकार द्वारा जगह का प्रबंध होने पर मिसेज बुईल्सन ने 1830 में पुणे में शनिवारवाडे में एक स्कूल खोला, ऐसा उल्लेख मिलता है। लेकिन इस संदर्भ में बार्ट फ्रिअर नामक मिशनरी कहता है कि ''इस स्कूल में केवल आठ लडकियां आती थीं, जो 5-6 वर्ष से बड़ी नहीं थी । फिर भी उनको पढ़ाने का काम अत्यंत गुप्त रूप से होता था ।'' इस स्कूल में पढ़ने वाली लड़कियां चोरी छुपे आकर लौटती थीं । अन्ततोगत्वा मजबूर होकर मिसेज बुईल्सन को 1832 में यह स्कूल बंद करना पड़ा । इसी अवसर पर मोडक नामक मिशनरी बने व्यक्ति ने महारों की बस्ती में लडकियों के लिए एक स्कूल खोला । लेकिन रूढिग्रस्त दलितों ने ही वह स्कूल बंद करना पड़ा । इसी अवसर पर मोडक नामक मिशनरी बने व्यक्ति ने महारों की बस्ती में लडकियों के लिए एक स्कूल खोला । लेकिन रूढ़िग्रस्त दलितों ने ही वह स्कूल बंद कर दिया । 1844 में यूरोपीय स्काटलैंड मिशन ने मंगलवार पेठ में एक कन्या स्कूल खोला जिसमें यूरोपीय अध्यापिका पढ़ाती थी, जहां पर साधन-सामग्री की सुविधा भी उपलब्ध थी । लेकिन 1847 में यह स्कूल भी बंद हो गया । इससे स्पष्ट है कि 19 वीं सदी में पुणे में स्त्री एवं दलितों के लिए शिक्षा देने हेतु स्कूल खोलना और चलाना कितना कठिन था ।

जब पहली जनवरी, 1848 को ज्योतिबा फुले ने पुणे में पहला बालिका स्कूल खोला और सावित्री बाई इसकी प्रथम छात्रा और तदनन्तर प्रथम महिला अध्यापिका बनीं तब शुरू में ज्योतिबा फुले ने अपने दोस्तों की लड़कियों को ही स्कूल में दाखिल किया। इनमें शामिल लड़कियों के नाम हैं :

1. अन्नपूर्णा जोशी	5 वर्ष
2. सुमती मोकाशी	4 वर्ष
3. दुर्गा देशमुख	6 वर्ष
4. माधवी थत्ते	6 वर्ष

5. सोनू पवार	4 वर्ष
6. जानी करडिले	5 वर्ष

इन छह में से चार लड़कियां ब्राह्मण, एक धनगर (गडरिया) और एक मराठा जाति की थी । धीरे-धीरे स्कूल में लड़कियों की संख्या में वृद्धि होने लगी। बाद में संख्या इतनी बढ़ गयी कि सावित्री को एक और अध्यापक की आवश्यकता महसूस होने लगी । लेकिन मुफ्त में अध्यापन कार्य करने के लिए कोई व्यक्ति मिलना मुश्किल था। आखिर विष्णुपंत थत्ते ने अध्यापक के रूप में कार्य किया ।

15 मई, 1948 को फुले दम्पत्ति ने पुणे की ही हरिजन बस्ती में एक ऐसा स्कूल खोला जिसमें लडके और लडकियां साथ-साथ शिक्षा प्राप्त कर सकते थे । इस स्कूल की अध्यापिका का कार्य भार शुरू में सगुणा बाई उर्फ आऊ ने संभाला और बाद में सावित्री बाई भी वहां पढ़ाने का काम करने लगीं । अब तो फुले दम्पत्ति के शिक्षा प्रसार कार्य को गति मिल गई । अल्पावधि में उन्होंने पुणे तथा उसके इर्द-गिर्द अनेकों स्कूल खोले, सदियों से जिनके लिए ज्ञानार्जन का मार्ग अवरूद्ध था, इन स्कूलों ने वह रास्ता खोल दिया । फुले दम्पत्ति द्वारा खोले गये स्कूलों का सिलसिला इस प्रकार है :

पाठशाला का स्थान	आरंभ तिथि
1. भिडेवाडा, पुणे	01-01-1848
2. हरिजनवाडा, पुणे	15-05-1848
3. हडपसर, जिला पुणे	01-08-1848
4. ओतूर, जिला पुणे	05-12-1848
5. सासवड, जिला पुणे	20-12-1848
6. आल्हाट का घर, कसवा, पुणे	01-07-1849
7. नायगांव, तालुका खंडाला, जिला सतारा	15-07-1849
8. शिरवल, तालुका खंडाला, जिला सतारा	18-07-1849
9. तलेगांव - ढभढेटे - जिला पुणे	01-08-1849
10. शिर, जिला पुणे	08-08-1849
11. अंजीरवाड़ी, माजगांव	05-03-1850
12. करंजे, जिला-सतारा	06-03-1850
13. भिगार	19-09-1850
14. गुंढ़वे, जिला पुणे	01-12-1850
15. आप्पा साहब चिपूणकर हवेली, पुणे	03-07-1851
16. नाना पेठ, पुणे	17-09-1851
17. रास्ता पेठ, पुणे	01-12-1851
18. वेताल पेठ, पुणे	15-03-1852

इतने कम समय में इन पाठशालाओं की स्थापना करते समय फुले दम्पत्ति को सामाजिक एवं आर्थिक दोनों समस्याओं से जूझना पड़ा। 19 वीं सदी में इतने स्कूल खोलकर उन्हें सुचारू रूप से चलाना कोई आसान काम नहीं था । स्त्री-शिक्षा एवं दलितों की शिक्षा का जो महत्वपूर्ण कार्य इन्होंने किया उसके पीछे एक दर्शन था कि समाज परिवर्तन का एक प्रभावी साधन शिक्षा है। इस कार्य में सगुणाबाई क्षीर सागर, विष्णुपंत थत्ते, वामनराव खराडकर तथा फातिमा शेख आदि प्रगतिशील स्त्री पुरुषों का योगदान भी अत्यंत महत्वपूर्ण था।

फुले दम्पत्ति के द्वारा खोले गये नार्मल स्कूल में पढ़ी फातिमा शेख उस स्कूल की प्रथम छात्रा और प्रथम भारतीय मुस्लिम महिला अध्यापक थी । सावित्री और फातिमा शेख दलित समाज के लड़कियों के स्कूल में अध्यापन कार्य करती थीं । सावित्री बाई ने 1853 में ही सिद्धांत पेश किया कि जिस समाज और परिस्थिति से लड़के-लड़कियां आती हैं, उसका असर संबंधित लड़के-लड़कियों के ज्ञानार्जन पर भी होता है ।

ईसाई मिशनरी मिस फैरार द्वारा अहमदनगर के पास चलायी जाने वाली लडकियों की पाठशाला को देखकर ज्योतिबा फुले बहुत प्रभावित हुए थे । उनके विचारों को गति एवं दिशा मिल गयी। इस संदर्भ में फुले ने लिखा है : ''मेरा ध्यान सबसे अधिक लडकियों की पाठशाला ने आकृष्ट किया। गहन विचार के बाद में इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि इन पाठशालाओं की आवश्यकता लडकों की पाठशालाओं से भी अधिक है क्योंकि सुशिक्षित माताओं द्वारा ही शिक्षा के पाठ बच्चों को हदयंगम कराये जा सकते हैं । अपने अहमदनगर प्रवास के दौरान अपने एक मित्र के साथ मिस फैरार द्वारा संचालित अमरीकन मिशन से संबंद्ध लडकियों की पाठशाला और इन पाठशालाओं में लड़कियों के शिक्षण के तरीके को देखकर मेरा यह विचार और पुष्ट हुआ ।''

फुले के इन विचारों एवं कर्म से प्रेरणा लेकर सावित्री बाई ने तत्कालीन प्रतिकूल सामाजिक व्यवस्था से लोहा लेते हुए शादी के पश्चात खुद शिक्षा प्राप्त करके स्त्री जाति के लिए शिक्षा के दरवाजे खोलने का जो क्रान्तिकारी कार्य किया, उसका 19वीं सदी में ही नहीं बल्कि 20 वीं सदी में भी कोई जोड नहीं है । उनके स्त्री-चेतना और समाज-सेवा कार्यों पर यहां चर्चा नहीं की गयी है जिसमें वे जीवन-पर्यन्त लगी रही ।◆